Dr. Vandana Suman
Associate professor
Dept of Philosophy
H.D. Jain College, Ara

M.A – II Sem. Philosophy
CC–09 – Indian Linguistic trends

1. Metaphysical basis of linguistic trends in Indian Philosophy

भारतीय दर्शन में "भाषा विश्लेषण" का तात्विक आधार।

भारतीय दर्शन के संदर्भ में वाक्य में निहित शब्द तत्वमीमांसीय भी होते हैं अर्थात वाक्य का अर्थ तत्वमीमांसा की दृष्टि से भी चुना जाता है। इस प्रकार भारतीय दर्शन के अन्तर्गत भाषा विश्लेषण का तात्पर्य तत्वमीमांसीय कथनों, ज्ञानमीमांसीय (संज्ञानात्मक) कथनों, क्रियात्मक (नैतिक) कथनों, उच्चारण शास्त्र, व्युत्पत्तिशास्त्र, तार्किक विन्यास वाक्य तथा अर्थमीमांसक कथनों का विश्लेषण है। पाश्चात्य दर्शन के अन्तर्गत भाषा विश्लेषण वाक्य विन्यास, तार्किक विन्यास, उच्चारणशास्त्र और अर्थमीमांसा तक ही सीमित है। अतः भाषाविश्लेषण के क्षेत्र में भारतीय दर्शन पाश्चात्य दर्शन की अपेक्षा अधिक व्यापक है।

भारतीय भाषा विश्लेषण का आरम्भ यास्क के निरुक्त से माना जाता है जबकि पाश्चात्य भाषाविश्लेषण का प्रारम्भ विट्गेन्स्टाइन के ट्रैक्टेटस से माना जाता है। यास्क का काल सातवीं शताब्दी ईसा पूर्व माना जाता है जबकि विट्गेन्स्टाइन का काल बीसवीं शताब्दी का मिताद्धं है।

यास्क के निरुक्त में भाषाविश्लेषण का व्युत्पत्तिपरक स्वरूप पाया जाता है, जबकि विट्गेन्स्टाइन के दर्शन में भाषा विश्लेषण का अर्थमीमांसा स्वरूप पाया जाता है। दर्शनशास्त्र के क्षेत्र में भाषाविश्लेषण का तात्पर्य अर्थमीमांसा से ही लिया जाता है। इस दृष्टि से भारतीय दर्शन के अंतर्गत भर्तृहरि की पुस्तक "वाक्यपदीय" को ही भाषाविश्लेषण का प्रथम ग्रंथ माना जा सकता है। भर्तृहरि का काल चौथी शताब्दी है। अतएव भारतीय दर्शन में भाषाविश्लेषण अत्यन्त प्राचीन है, जबकि पाश्चात्य दर्शन में यह अत्यन्त नवीन है।

भारतीय दर्शन के अंतर्गत भाषाविश्लेषण का स्वरूप जिस रूप में प्रतिष्ठित है, वस्तुतः पाश्चात्य दर्शन में भाषाविश्लेषण को वह स्वरूप नहीं पाया जाता है। पाश्चात्य भाषाविश्लेषण शब्द और अर्थ के सम्बन्ध को बतलाना ही इतिश्री समझता है। साधारण भाषा और दार्शनिक भाषा के रूप में शब्दार्थ और वाक्यार्थ की विवेचना की जाती है। लेकिन भारतीय भाषा विश्लेषण शब्दार्थ और वाक्यार्थ तक ही सीमित नहीं है। इसमें व्याकरण की सभी विषय आ जाती है। विषयों की दृष्टि से भी भारतीय भाषा विश्लेषण अपेक्षाकृत व्यापक है।

भारतीय भाषाविश्लेषण के
स्रोत भारतीय दर्शनों के नास्तिक और आस्तिक सम्प्रदायों में भी देखे जा सकते हैं। आस्तिक सम्प्रदाय के अन्तर्गत भारतीय भाषा विश्लेषण का आरम्भ न्याय दर्शन के प्रणेता गौतम से माना जा सकता है। नव्य न्याय के प्रवर्तक गंगेश उपाध्याय की तत्वचिन्तामणि भारतीय भाषा विश्लेषण की प्रामाणिक पुस्तक मानी जाती है।

न्याय दर्शन के पश्चात भाषा विश्लेषण की दृष्टि से मीमांसा दर्शन प्रमुख है। न्याय दर्शन और मीमांसा दर्शन शब्द-विवेचन में कई बिन्दुओं पर परस्पर असहमत हैं। अतएव भारतीय भाषा विश्लेषण को समझने के लिए इन दोनों दर्शनों का अध्ययन आवश्यक है।

जैन दार्शनिक हेमचन्द्र की पुस्तक शब्दानुशासन तथा मल्लीसेन की स्याद्वादमंजरी में भाषा विश्लेषण का विवेचन पाया जाता है। बौद्ध दार्शनिक दिङ्नाग और धर्मकीर्ति की पुस्तकें क्रमशः प्रमाण समुच्चय और प्रमाणवार्तिक भाषा विश्लेषण की विवेचना करती हैं। इनके अतिरिक्त रत्नकीर्ति की अपोहसिद्धि, शान्तरक्षित की तत्वसंग्रहकारिका एवं कमलशील की तत्वसंग्रहपंजिका में भी भाषा विश्लेषण की विवेचना पायी जाती है।

वेदान्त एवं अलंकार-शास्त्र की दृष्टि से भी देखा जाय तो

भाषा विश्लेषण की झाँकी शंकर के ब्रह्मसूत्रभाष्य (जिसे शंकरभाष्य भी कहा जाता है), वाचस्पति मिश्र की भामती टीका और पार्श्व राजा नरेन्द्र की वेदान्त परिभाषा में मिलती है। यह झाँकी अद्वैतवादी भर्तृहरि ने भी अद्वैतवादी दृष्टि से भाषा का विश्लेषण किया है। आनन्दवर्धन के ध्वन्यालोक पर अभिनवगुप्त ने "ध्वन्यालोकलोचन" नामक टीका लिखी।

भाषा विश्लेषण के स्रोत को वैदिक ग्रंथों में पाया जाता है। वैदिक ग्रंथों के अन्तर्गत वेद, उपनिषद्, स्मृति, पुराण आदि आते हैं। तांत्रिक ग्रंथों तथा योग की पुस्तकों में भी भाषा-विश्लेषण का बीज देखा जा सकता है जैसे - षट्चक्र निरूपण, हठयोग प्रदीपिका नामक पुस्तकें।

भाषा द्वारा ही किसी वस्तु का परिचय अभिव्यक्त वाणी या वाक् द्वारा होती है। यही कारण है कि ऋग्वेद में भाषा, वाक् या वाणी की स्तुतियाँ की गयी है और 'वाक्' देवता की सम्राज्ञी प्रस्तुत कर वाणी को देवी के रूप में उसके मुँह से कहलवाया है कि वाणी ही सब भुवनों का निर्माण करती है तथा धरती और वायु के समान चलती है और द्युलोक से भी बढ़ी है। वाणी या भाषा का ज्ञान सरस्वती की कृपा से ही संभव है। सरस्वती

विद्या या ज्ञान की देवी माना जाता है। अथर्ववेद में कहा गया है कि "वाक देवी सरस्वती हमारे सम्पर्क है।" इस तात्पर्य मनुष्य है वाक या वाणी को देवी कहा गया है और इसे सरस्वती की संज्ञा दी गयी है। सामवेद में भी सरस्वती को प्रणम्य माना गया है, क्योंकि गायत्री आदि सात छन्द एवं गंगादि नदियों की बहने सदैव हमारी मनोकामनाएँ पूरी करती है। शतपथ ब्राह्मण में कहा गया है कि वाक परम सत्ता है। ऐतरेय ब्राह्मण में भी वाक या भाषा को परमसत्ता की संज्ञा दी गयी है।" बृहदारण्यक उपनिषद में भाषा या वाक को सर्वोच्च देवी के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है।"
तैतिरीय संहिता में कहा गया है कि इन्द्र ने वाक या भाषा का विश्लेषण किया और तब से भाषा विश्लेषण की उत्पत्ति हुई। मनुस्मृति में अक्षर (भाषा) को [struck] [struck] ब्रह्मा और प्रजापति की संज्ञा देकर इसे अविनाशी बतलाया है। इस प्रकार भारतीय भाषाविश्लेषण का बीज स्पष्टतः वैदिक ग्रंथों में निहित है।

भाषा का स्वरूप :—

ऋग्वेद में भाषा को "बैल" की संज्ञा दी गयी है, कहा गया है कि एक बैल ऊँचे स्वर में क्रन्दनाद कर रहा है। यह विलक्षण प्रकार का बैल है जिसके चार सींग, तीन पैर, दो सिर और सात हाथ हैं। इसे तीन स्थानों

में (प्रकार से) बाँधा गया है। यह कह रहा है कि महादेव मर्त्यों में अवतरित हुए हैं। यहाँ भाषा की उपमा बैल से दी गयी है। अतः भाषा उपमेय और बैल उपमान है। दूसरे शब्दों में, उपमेय-उपमान सम्बन्ध द्वारा भाषा और बैल के अपार्थक्य को बतलाया गया है। वस्तुतः बैल के चार सींग से चार प्रकार के शब्द-भेद का संकेत किया गया है। ये शब्द-भेद हैं — नाम, क्रिया, उपसर्ग और निपात। बैल के तीन पैर का अर्थ है काल के तीन भेद — भूत, वर्तमान और भविष्य। दो सिर का तात्पर्य भाषा के दो स्वरूप से है — नित्य (स्फोट) और अनित्य (ध्वनि)। सात हाथ हैं सात विभक्तियों (कारकों) का द्योतक है। बैल का तीन स्थानों में बंधा होना बतलाता है कि भाषा की अभिव्यक्ति उच्चारण द्वारा होती है और उच्चारण की प्रक्रिया का आरम्भ हृदय से होता है, फिर कंठ और फिर मूर्धा (शिरस) में आने के पश्चात वायु की गति से ध्वनियों का उच्चारण होता है। भाषा की अभिव्यक्ति ध्वनि द्वारा उच्चारण के माध्यम से होती है और उरस्थ वायु का प्रवाह कंठस्थ होते हुए तालु, जिह्वा आदि उच्चारण-स्थानों में प्रवेश करने के पश्चात ही ध्वनि वायु-वेग से उच्चरित होती है। महादेव मर्त्यों में अवतरित हुए हैं का

तात्पर्य परम भाषा (स्फोट या शब्द-ब्रह्म) ही साधारण भाषा (लौकिक भाषा) में अभिव्यक्त होती है। अतएव परम भाषा या परमतत्व (शब्द-ब्रह्म) तक पहुँचने के लिए साधारण भाषा का ज्ञान आवश्यक है। बैल के चार सींगों का तात्पर्य भाषा के चार स्तरों से भी है- परा, पश्यन्ति, मध्यमा और बैखरी। परा तो शब्द ब्रह्म है। बैखरी साधारण भाषा है। यह बोलचाल की भाषा है। मध्यमा प्रेम और आकृत की भाषा है। पश्यन्ति अन्तर्मन और अन्तर्ध्यान की भाषा है। परा सर्वोत्तम, सर्वश्रेष्ठ और परम भाषा है।

ऋग्वेद के उक्त सूक्त का अर्थ स्पष्ट करता है कि भाषा के दो स्वरूप हैं- पारमार्थिक या तत्वमीमांसीय और व्यावहारिक या वैयाकरण। भाषा का तत्वमीमांसीय स्वरूप शब्दब्रह्म या स्फोट है। यह मात्र एक अविभाज्य अवयवहीन (निरवयव) पूर्ण और अद्वितीय है, जिसे अद्वैत भी कहा जाता है। भाषा का वैयाकरण रूप व्याकरणशास्त्र या व्याकरण दर्शन का पर्याय है। व्याकरण शास्त्र के (अनुसार) के अनुसार भाषा वह है जो विचार भाव और संवेग को शब्दों द्वारा अभिव्यक्त करती है। वस्तुतः भाषा का तात्पर्य ही शब्द है। इसलिए भाषा दर्शन का तात्पर्य शब्द दर्शन है। भाषा या शब्द-दर्शन के अन्तर्गत भाषा अर्थात् शब्द

का विश्लेषण होता है। इसलिए भाषा दर्शन को भाषाविश्लेषण भी कहते हैं। भाषा का विश्लेषण करने पर हमको कोई अक्षर के रूप में प्राप्त होते हैं, क्योंकि शब्द भी अक्षर से बनते हैं। शब्द का अर्थ केवल पद नहीं बल्कि वाक्य भी है। कहा गया है कि आप्तोपदेशः शब्दः अर्थात् आप्त पुरुष (विश्वसनीय या प्रामाणिक व्यक्ति) का उपदेश या वचन शब्द है। उपदेश वाक्यों में दिये जाते हैं। अतएव वाक्य शब्द है। वाक्य का प्रयोग तीन कालों और सात विभक्तियों में होता है। वाक्यों में एक पद (शब्द) या अधिक पदों (शब्दों) का प्रयोग होता है। ये पद संज्ञा, सर्वनाम विशेषण, क्रिया, अव्यय होते हैं। कोई भी पद क्रिया (धातु) में उपसर्ग या प्रत्यय लगाकर बनता है। अतएव व्याकरण शास्त्र के अंतर्गत संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया, अव्यय, उपसर्ग, प्रत्यय, कारक, काल आदि का अध्ययन होता है। ये सभी भाषा के संरचनात्मक तत्व हैं। इनके साथ ही किसी शब्द का उच्चारण और उसकी ध्वनि के उतार भी चढ़ाव का व्यवस्थित क्रम के नियम भी होते हैं। इनकी जानकारी भी व्याकरणशास्त्र में मिलती है। व्याकरणशास्त्र का यह अंश उच्चारण-शास्त्र या ध्वनिशास्त्र कहलाता है।

किन्तु उच्चारण या ध्वनि से जिन शब्दों या वाक्यों को अभिव्यक्त किया जाता है, उनके अर्थ उच्चारण या ध्वनि-क्रम के अनुकूल ही अभिव्यक्त होते हैं। इसलिए किसी शब्द या वाक्य के सही अर्थ जानने के लिए उच्चारण का सही-सही प्रयोग आवश्यक है। व्याकरणशास्त्र का वह भाग जो बतलाता है कि शब्द या वाक्य के अर्थ की अभिव्यक्ति किस प्रकार होती है, अर्थ-मीमांसा या शब्दार्थ मीमांसा कहलाती है। उच्चारणशास्त्र, ध्वनिशास्त्र, अर्थमीमांसा एवं संरचनात्मक व्याकरण शास्त्र ये सभी साधारण भाषा या वैयाकरण के अंग है।

भाषा का महत्त्व : भाषा ही वह माध्यम है जिसके द्वारा हम अपनी बात समझा पाते हैं। 'भाषा' ही वह माध्यम है जो ईश्वर, ब्रह्म और आत्मा, मोक्ष जैसे अमूर्त एवं अलौकिक सत्ताओं से हमारा परिचय कराती है। इस प्रकार भाषा ही सम्पूर्ण सृष्टि का आधार है। दंडी के शब्दों में, "भाषारूपी ज्योति के कारण सारे संसार (तीनों लोकों) में प्रकाश फैला हुआ है।" प्रकाश का अर्थ असंदिग्ध ज्ञान है। दूसरे शब्दों में, असंदिग्ध ज्ञान भाषा के सही नियमों को जानने और पालन करने से ही संभव है अन्यथा अस्पष्ट, संदिग्ध एवं भ्रमजन्य ज्ञान प्राप्त होता है। अतः भाषा ईश्वरीय शक्ति या आत्मा

पेड़-पौधों की भाषा (आकार) है। पशु-पक्षियों की भाषा के समान सांकेतिक होते हैं। सांकेतिक भाषा को ध्वन्यात्मक भी कहते हैं क्योंकि इसमें केवल ध्वनि मात्र द्वारा संकेत ग्रहण किया जाता है। जैसे - पशु-पक्षियों, नदी-झरने की भाषा। साधारण उच्चारित उच्चारण द्वारा ध्वनि की सहायता से भाषा का प्रयोग करता है। यह भाषा ध्वन्यात्मक होते हुए भी शब्दयुक्त होती है। अतः भाषा सांकेतिक और शाब्दिक दोनों होती है, और भाषा के दोनों अर्थों को समझना आवश्यक है। अर्थ समझने के लिए भाषा का विवेचन या विश्लेषण अनिवार्य है। सम्भवतः इसी तथ्य को ध्यान में रखकर दण्डी ने अपनी पुस्तक "काव्यादर्श" में भाषा को "शिष्टानुशिष्टानाम" कहा है। शिष्टानुशिष्टनाम" का अर्थ है ऐसे शब्द जो शिष्ट समाज द्वारा स्वीकृत और वैयाकरणों के नियमों से प्रमाणित है। शिष्ट समाज का तात्पर्य शिष्ट समाज से है जो भाषा को जानता है, भाषा को जानने वाला ही वैयाकरणों द्वारा प्रतिपादित प्रामाणिक नियमों को समझ सकता है। यही कारण है कि ऋग्वेद का ऋषि उन्हें अज्ञानी मानता है जो "भाषा को देखकर भी नहीं देखता है, भाषा को सुनकर भी नहीं सुनता है।" ऋषि के इन शब्दों का अर्थ है कि

भाषा के सभी स्वरूपों - ध्वन्यात्मक, संरचनात्मक, उच्चारणपरक, अर्थात्मक आदि को जानने और समझने के पश्चात ही कोई सही मायने में भाषाविद या ज्ञानी हो सकता है। भाषा का ज्ञान व्याकरण के माध्यम से ही संभव है। यही कारण है कि भाषा दर्शन को व्याकरण दर्शन की संज्ञा दी जाती है। आयंगार की मान्यता है कि "प्राचीन काल में भाषा का व्यवहार तो हो रहा था पर इसका विवेचन-विश्लेषण नहीं हुआ था। इस विश्लेषण (भाषा का विश्लेषण) का नाम ही "व्याकरण" है। वैदिक काल में भाषा अव्याकृत रही होगी। फलतः कतिपय विद्वानों को इसके विश्लेषण की आवश्यकता प्रतीत हुई। उन विद्वानों ने "इन्द्र" से इस कार्य के सम्पादन का दायित्व वहन करने की प्रार्थना की। उनकी प्रार्थना स्वीकार कर इन्द्र ने भाषा-विवेचन (विश्लेषण) के लिए एक व्याकरण की रचना की। इस व्याकरण का नाम "ऐन्द्र व्याकरण" है जो भारतीय भाषा विश्लेषण की प्रथम पुस्तक मानी जाती है। परन्तु आज यह पुस्तक अलभ्य है। इन्द्र के जन्म, देश, काल, ग्रंथ और आदि के विषय में हम पूर्णतः अनभिज्ञ हैं। किंवदन्ती है कि तमिल भाषा का प्रथम व्याकरण "तोल्काप्पियम" ऐन्द्र व्याकरण से प्रभावित है। परन्तु पाणिनी ने अपनी पुस्तक अष्टाध्यायी में इन्द्र और ऐन्द्र व्याकरण का उल्लेख नहीं किया है, जबकि अपने पूर्ववर्ती दस आचार्यों का नाम उल्लेखित किया है जिनमें प्रमुख हैं - शाकटायन और गार्ग्य। शाकटायन व्युत्पत्तिवादी थे, जबकि गार्ग्य अव्युत्पत्तिवादी थे।